काफी गायन विद्या का विश्लेषणात्मक अध्ययन

श्रुति होड़ा*

संगीत शब्द सम् और गीत दो शब्दों के समन्वय से बना है। सम का भाव है–'सम्यक' अर्थात भली भॉति और गीत अथवा गीतम् का अभिप्राय गाने से है, अर्थात किसी गाने को भली भॉति गाना संगीत कहलाता है। संगीत की मान्यता प्राप्त परिभाषा ''सम्यक् गीयते इति संगीतम'' भी इस दृष्टि से पूरी उतरती है।

वास्तव में संगीत एक सामूहिक शब्द है, जिसमें गायन, वादन और नृत्य तीनों कलाओं को शामिल किया गया है।

''गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते''। यदि सगीत के विशाल क्षेत्र पर दृष्टिपात करे तो एक बात जो सपष्टता उभर कर सामने आती है वह यह है कि इस संगीत में शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम, लोक, कव्वाली, फिल्म संगीत आदि सभी आ जाते हैं।

जिस प्रकार राष्ट्रीय संगीत में ठुमरी, सुगम संगीत की एक विद्या है काफी जो आधुनिक समय में स्वतन्त्र विद्या मानी जाती हैं सूफियों के भक्ति सम्प्रदाय में इसे सूफियाना कलाम भी कहा जाता है चाहे वह कव्वाली अंग के साथ पीरों के मजारों पर गाई जाए या कीर्तन शैली के सभी रूपों में प्रस्तुत की जाए। काफी को गायक कलाकारों ने ख्याल की तरह भी गाया, ठुमरी का भी इस विद्या पर प्रयाप्त प्रभाव पड़ा। टप्पा, दादरा, सुगमधुनो, कव्वाली अंग के साथ–साथ लोक संगीत में भी काफी पर्याप्त' प्रभावित हुई।

काफी गायन में सरल जीवन, भागवत प्रेम, आत्मा की शुद्धता और चिरस्थायी आन्नद व सौभाग्य की प्राप्ति, ईश्वर के सिवाय कुछ नही हैं, ईश्वर के सिवाय किसी का अस्तित्व नही हैं धार्मिक सहिष्णुता की भावना का विकास तथा अनेक सामाजिक सांस्कृतिक गुणों के बीच संश्लेषण की प्रकिया के सूत्रपात पर जोर दिया गया है।

काफी गायन विद्या का साहित्यिक पक्षः–

1 काफी का पहला अर्थ है पूर्ण करने वाला

2 काफी शब्द का एक अर्थ है, खुदा

***एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत एवं वादन विभाग, पी.जी.जी.सी.जी,सेक्टर–11 चण्डीगढ़**

3 कुफा शब्द का अर्थ है तराजू का एक पलड़ा और इसी शब्द कुफा से भी काफी शब्द की उत्पति मानी जाती है। काफी के मुखड़े के अगले–पिछले दोनों मिसरे भी तराजू के दोनों पलड़ों की भान्ति समतुल्य होते है। अतः एव कुछ विद्वान काफी शब्द की उत्पति कुफा से भी मानते हैं।

कुफा का एक अर्थ गार भी है। अरबी इतिहास की एक विचार धारा के अनुसार सूफी लोग गारों में रहते थे। इसमें पंडे लोग खुदा की स्तुति में काफियाँ गाते थे।

4 सुरेन्द्र सिंह कोहली काफी शब्द का निकास कैफी लफज़ में से मानते हैं। उनका कहना है कि काफी को लिखने और गाने वाले कैफी नशे में डुबे लोग हैं। इसलिए काफी शब्द का विकास कैफी शब्द से ही मानना ठीक है क्योंकि भक्ति रस एक नशा है। जिस में एक खुमारी सी चढ़ी रहती है। काफी साहित्य भक्ति से भरपूर और रहस्यवादी है। इस में दार्शनिक एवं सैद्धांतिक चिंतन की प्रधानता रहती है। इस समय में सूफी साधक परमसता को प्रियतम के रूप में अनुभूत करने लगे। फतुहात–ए–मक्किया'' में इस प्रेम को अभिव्यक्त करते हुए कहा गया है कि ''ईश्वर के सिवाय कुछ नही है, ''ईश्वर के सिवाय किसी का अस्तित्व नहीं है।'' काफी की साहित्यिक विशेषताओं तथा उसमें प्रयुक्त होने वाले काव्यगत गुणों, छन्दों, अंलकारों आदि को दृष्टि में रखकर विभिन्न विद्वानों द्वारा इस गायन विद्या की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं। इन परिभाषाओं में सूफी सन्तों का मानव संस्कृति, मुस्लिम समाज, नैतिकता तथा अध्यात्मिक सिद्धान्तों की रक्षा पर जोर दर्शाया गया है। इतने कहने में अत्योक्ति न होगी कि काफी पंजाबी की एक ऐसी विद्या है जिसमें पंजाबी के साथ–साथ अन्य भाषाओं का मिश्रण लिए हुए विभिन्न छन्दों में रचित काव्य रूप है जिसके रचनाकार हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान सभी धर्मो के लोग है, चाहे भारत में इसे सूफी लोग ही लेकर आए। यह एक ऐसी सांगीतिक विद्या है जो एक व्यक्ति द्वारा भी तथा सामूहिक रूप से भी आध्यात्मिक रहस्यमयी ढंग से गाई जाती है।

काफी का एक और रूप भी है जिसमें इस विद्या को अनिबद्ध शैली में बिना वाद्यों और ताल के पाठ की तरह भी गाया जाता है। पंजाबी साहित्य में सर्वप्रथम काफी बाबा शेख फरीद ने लिखी। तद्उपरान्त सभी कवियों ने इसे अपनाया।

2. काफी का सांगीतिक पक्षः–

1. विभिन्न काफी गायक कलाकार–विभिन्न रेडियो स्टेशनों, टैलीविजन केन्द्रों पर अनेक कलाकारों द्वारा रिकार्डिगं के भंडार सुरक्षित हैं। आज हमारे पास विभिन्न कैसेट, रिकार्ड, Disk. MP3 CD आदि की भरमार है। जिसके आधार पर आधुनिक काफी गायक कलाकार कौन–कौन हैं, यह सूची बनाई जा सकती है। जो इस प्रकार हैः–

नजाफत–सलामत अली, बडाली बन्धू, मदन बाला सन्धू, श्रीमति शुभा मुदगिल, श्री पूर्ण शाह कोटि, उस्ताद लक्ष्मण दास सन्धू, भारतीय हुसैन बख्श एवं पाकिस्तानी हुसैन बख्श आदि। इन नामों से यह प्रमाणित हो जाता है कि काफी गायन विद्या को भारत एवं पाकिस्तान के समस्त गायकों (शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, लोकसंगीत आदि) ने अपनाया।

काफियों की परम्परागत धुनेः–

सूफी शायरों द्वारा काफियाँ संगीतबद्ध करके गाई जाती थी।

क्योंकि उस समय आज की तरह विद्युत–उपकरण रेडियो, टैलीविजन ग्रामोफोन रिकार्ड टेपरिकार्डर आदि उपलब्ध नहीं थे। अतः यही कारण है कि अधिकतर काफियों का विशुद्ध साहित्यिक स्वरूप तथा धुने आलोप हो गई है। इनके साहित्यिक तथा सांगीतिक स्वरूप लोकमुख यात्रा करके हमारे तक पहुँचे। सूफी शायरों द्वारा गेय रचनाओं को सर्वप्रथम कुसूर निवासी प्रेम सिंह ने रिर्काड किया। कव्वालों ने इस कलाम में अपनी ओर से क्या बढ़ाया और घटाया यह मालूम नहीं। आधुनिक उपलब्ध सूफी साहित्य वही है जो कव्वालों से सुनकर लिपिबद्ध किया गया। इस विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि बुल्लेशाह के नाम पर जो कुछ उपलब्ध है वह बुल्लेशाह का है या मिश्रित। किसी भी सूफी शायर की हस्तलिपि कहीं नहीं। समस्त उपलब्ध सूफी साहित्य में स्थान–स्थान पर भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। अतः स्पष्ट है कि प्रचलित कुछ काफियों की परम्परागत धुनों को दावे के साथ नहीं कहा जा सकता कि अमुक रचना की धुन शाह हुसैन की है अथवा अमुक रचना की धुन गुलाम फरीद जी की है। हो सकता है कि किसी संगीतकार द्वारा रचनाएँ धुन बद्ध की गई हो। इसलिए इन्हे परम्परागत धुने कहा जा रहा है। कुछ ऐसी घटनाएँ इस प्रकार है।

1 निऊँ ला लया बेपरवाह दे नाल– गायक कलाकार –बडाली बन्धु, उस्ताद लक्ष्मण दास सन्धू, हामिद अली बेला, इम्तियाज अली, रियाज अलीखां।

2 तत्ती रो–रो मैं बाट निहारा–गायक कलाकार–उस्ताद अमानत अली खाँ, उस्ताद लक्ष्मण दास सन्धु, आबिदा प्रवीण, प्रीति चावला, रजबअलीखां, चिराग अलीखां, हुसेन बख्श,

3 राझा जोगड़ा बन आईदा–गायक कलाकार– जगजीत सिंह जिरबी, गुलाम अली।

III.विभिन्न रागों में निबद्ध काफियाँः–

विभिन्न सूफी शायरों ने विभिन्न रागों में काफियाँ लिखी। आसा, सूही, सूही–ललित, आसावरी, धनाश्री, तोड़ी बरवा, सिरी राग, गौड़ी माझ, झिझोटी, गुर्जरी (गुजरी) देव गंधारी, बड़हंस, सौरठ, जय जयवन्ती, तिलंग सिन्धड़ा, बिलावल,

गौड़ बिलावल, रामकली ढोला, खट, पर्ज–जोग, तुखारी, केदार, भैरव, भैरवी, बसन्त, हिंडोल, सारंग कान्हड़ा, कान्हड़ा तिलंग कान्हड़ा मारु जगला, कल्याण, ललित, नट, नारायण, खमाज मालकौस, विभास, प्रभाती, सिद्ध, जोग, पीलू, पहाड़ी काफी।

सूफी शायरों द्वारा निबद्ध की गई काफियों को गायक कलाकारों ने निर्धारित रागों में न गाकर रागों के चयन सम्बन्धी पूर्ण स्वतन्त्रता ली है। उदाहरणार्थ शाह हुसैन द्वारा लिखित काफी ''दर्द विछोड़े दा हाल, नी मै किन्हू आखा ''राग बसन्त में लिखी गई।

परन्तु पाकिस्तानी गायक हामिद अली बेला एवं हसंराज हंस द्वारा यही काफी प्रारम्भिक शेयर दरबारी राग में, बाकी पूरी काफी राग धनाश्री में निबद्ध करके गाई गई।

वादको द्वारा दिये गये टुकड़ों में पीलू में तीव्र में, कोमल घ, शुद्ध नी का प्रयोग किया गया है। अतः स्पष्ट है कि कलाकारों ने शायरों द्वारा निर्धारित रागों की अपेक्षा इन रागों के चयन सम्बन्धी न केवल पूर्ण स्वतन्त्रता ही ली है अपितु एक ही काफी में तीन चार या इससे अधिक रागों का प्रयोग भी किया गया है।

काफी विद्या में प्रयुक्त संगति वाद्य–

काफी गेय विद्या में आजकल निम्न वाद्य प्रयोग में लाए जाते हैं–

अ) ततवाद्य–इकतारा, तुम्बी, तानपूरा, सितार, रबाब, गिटार, बैंजो, स्वरमंडल, मेडोलिन।

आ) वितत वाद्य– वायलिन, सारंगी, सारिन्दा।

क) सुषिर वाद्य–बासुरी, हरमोनियम, क्लेरोनेट, सैक्सोफोन।

ख) अवनद्ध वाद्य–तबला ढोलक, डफ, ढड।

ग) द्यन वाद्य– करताल मुराकस।

IV.- **काफी विद्या में प्रयुक्त ताल**–भारतीय संगीत में गायन की प्रत्येक विद्या तथा ख्याल, ठुमरी, टप्पा, तराना अनेक तालों में निबद्ध होती है। ठीक उसी प्रकार काफी गायन विद्या में भी अनेक तालों का प्रयोग है। काफियों की गायन विद्या का अपना एक स्वतन्त्र काफी ठेका होता है। जिस में सैद्धान्तिक दृष्टि से काफियों का प्रयोग उचित है लेकिन गायक कलाकारों ने तालों का चयन अपनी इच्छानुसार किया है।

V. काफी गायन विधा पर अन्य गेय विद्याओं का प्रभाव–

1. **काफी गेय विद्या पर ख्याल का प्रभाव** –उस्ताद अमीर खां साहिब के शिष्य पण्डित अमरनाथ जी द्वारा राग भैरवी में एक ताल में छोटे ख्याल के रूप में एक काफी गायी गई–काफी के बोल है–

''भाग जिन्हा दे चंगे, सज्जना गल लग्गीयाँ।

श्रीमती शुभा मुदगिल द्वारा गायी गई बाबा बुल्लेशाह की रचना–'' इक टूना चंम्बा गांवागी'' का हिन्दी अनुवाद'' एक टूना अचरज गाऊ जी'' राग धानी पर आधारित ताल दीपचन्दी में पेश किया गया। यद्यपि मैग्नासाऊंड कम्पनी द्वारा ताल के ठेके में कुछ परिवर्तन पाश्चात्य वाद्यों पर कर दिया गया है, किन्तु रचना को भली भान्ति सुनने से शोध कर्त्ता को ताल दीपचन्दी में निबद्ध ख्याल शैली का ही आभास होता है।

2. काफी गायन विद्या पर ठुमरी का प्रभाव–

ठुमरी शैली में गायी गई कलाकारों की कुछ काफियो के उदाहरण इस प्रकार हैः–

1 बडाली बन्धु–कदी आ मिल यार पिआरिआ, दिल लालया बेपरवाहदे नाल, तती रो रो मै बाट निहारा, न मार नैना दे तीर बे साँवला।

2 उस्ताद लक्ष्मण दास सन्धुः–इक़ राझा मैनू लोडीदा, दरदमंदा तो दरसमाणाँ, आवो सहियो रल देवों नी बधाई, भावे जाण न जाण, राझां जोगज़ बण आय, दिल ला लया बेपरवाह दे नाल, तती रो–रो मै बाट निहारा, न मार नैनो दे तीर बे साँवला।

इसी काफी को उस्ताद अमानत अली खाँ ने ठुमरी के अन्दाज में गाया। इसके अतिरिक्त ठुमरी अन्दाज में काफियाँ गाने वालो में ताज मुल्तानी, एजाज हुसैन हजरबी, तुफैल नियाजी, इकबाल बाबू, प्रवीण नजर, हुसैन बख्श, रंजना बलदेव, शरण नारंग, सलीम इकबाल आदि नाम आते हैं।

3.काफी गायन विद्या पर टप्पा गायन का प्रभाव :– टप्पा और काफी दोनों पर एक दूसरे का इतना अधिक प्रभाव है कि कुछ लोग काफी के स्थाई, अन्तरे को टप्पा शैली में गानक को ही टप्पा कह देते हैं। श्री कुन्दनलाल काफिया इस प्रकार गाते हैंः– आ वस मेडेण कोल, यार सिपाहिड़ा, दरदा दी मारी जिन्दड़ी अजीब ए।

काफी पर दादरा का प्रभाव–दादरा शैली में काफियाँः– कुर्बानअली नियाजी ने सट्ट इक गैर खुदा दी, की बेदरदा दे संग यारी तथा हुसैन बख्श ने सहियों सावण आया, ढोलणा नहीं आया आदि बहुत सुन्दर ढंग से गाई है।

इसके अतिरिक्त पठानेखां, पं. अमरनाथ तथा अन्य भी अनेक कलाकारों ने कई काफियॉ गाई हैं जिनमें दादरा का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। इसी प्रकार काफी पर सुगम धुनों, लोक धुनों तथा कव्वाली अंग का भी प्रभाव पड़ा तथा काफी गायन विधा ने समस्त विधाओं को बखूबी अपनाया तथा साथ ही साहित्य तथा संगीत का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं जो काफी गायन विद्या के प्रभाव से अछूता हो। आधुनिक उपलब्ध सूफी साहित्य एवं संगीत के आधार पर काफियों के चार वर्ग बनाए जा सकते हैं।

मुलतानी काफी, सिन्धी काफी, पहाड़ी काफी तथा पंजाबी काफी इनमें से मुलतानी काफी, सिन्धी काफी एवं पहाड़ी काफी सम्बन्धी काफी कुछ सामग्री पाकिस्तान में भी उपलब्ध होती है। भारत में ख्वाजा गुलाम फरीद जी की मुल्तानी काफियाँ ही प्रचलित है। अन्य किसी मुलतानी कवि को कम ही प्राथमिकता दी गई, क्योंकि इस सम्बन्ध में अधिकतर शोधकार्य पाकिस्तान में ही उपलब्ध हैं। आजकल भारत पाक कटु सम्बन्धों के कारण यह कार्य अत्यन्त दूभर है।

निष्कर्ष–अन्त में हम यही कह सकते हैं कि विभिन्न गायन विद्याओं के प्रभावाधीन अनेक रागों तालों से सुसज्जित यह गायन–विद्या काफी अपनी मनमोहक छवि लिए स्वतन्त्र विद्या के रूप में गायी जा रही है इसे दिन–प्रतिदिन लोकप्रियता प्राप्त हो रही है। हालांकि भारत में इसे अभी तक इतना सम्मान नहीं प्राप्त हो सका है जितना कि पाकिस्तान में, परन्तु काफी को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयत्न भी प्राप्त नहीं हुए है। वास्तविकता तो यह है कि प्रत्येक विद्या को लोकप्रिय बनाने हेतु उसमें हर प्रयोग उचित है जब इसे लोकप्रियता प्राप्त हो जाए तो फिर धीरे–धीरे उसे अपने शास्त्रीय नियमों के अन्तर्गत ले आना चाहिए। काफी गेय विद्या भी दिन प्रतिदिन निरन्तर उच्च शिखरों को छू रही है। यह विद्या अंतसलिला होकर युग दृष्टा की भॉति कल–कल कर प्रवाहित हो समाज को स्फूर्तिदायक संपदित दिशा प्रदत कर रही है यह विधा हिन्दू मुस्लिम दोनों समुदायों के मध्य धार्मिक सहिष्णुता की भावना विकसित करते हुए उनके सामाजिक, सांस्कृतिक गुणों के बीच संश्लेषण की प्रक्रिया का सूत्रपात करेगी।